International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 2; May 2016; Page No. 56-58

वेद भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं आध्यात्मिकता के मूल

भावना दहिया

Lecturer, Govt. Senior Secondary School, Rohtak, Haryana, India

सरांश

वेद भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं आध्यात्मिकता के मूल हैं। इनमें मानव–परिमार्जन का गुण निहित है। वेद वर्णित विविध विषयों में यज्ञ भी एक महत्त्वपूर्ण विषय है। यज्ञ एक ऐसा कर्म है, जिसके द्वारा समाज के आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक पक्ष को प्रदर्शित किया जा सकता है। यज्ञ आध्यात्मिक जीवन के आधार शिला माने गए हैं। वस्तुतः यज्ञ वेद कालीन समाज की एकता और धार्मिक प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। ये वेद परक संस्कृति के स्तम्भ कहे गए हैं, क्योंकि यज्ञों में समस्त देवों की शक्तियाँ एवं समग्र मानवता का स्वरूप विद्यमान है।

मूल शब्द: संस्कृति, सभ्यता, आध्यात्मिकता, धार्मिक प्रवृत्तियों।

प्रस्तावना

यज्ञ वेद कालीन संस्कृति की समन्वय–भावना को उजागर करता है। वेद भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं आध्यात्मिकता के मूल हैं। इनमें मानव–परिमार्जन का गुण निहित है। वेद वर्णित विविध विषयों में यज्ञ भी एक महत्त्वपूर्ण विषय है। यज्ञ एक ऐसा कर्म है, जिसके द्वारा समाज के आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक पक्ष को प्रदर्शित किया जा सकता है। यज्ञ आध्यात्मिक जीवन के आधार शिला माने गए हैं। वस्तुतः यज्ञ वेद कालीन समाज की एकता और धार्मिक प्रवृत्तियों के द्योतक हैं। ये वेद परक संस्कृति के स्तम्भ कहे गए हैं, क्योंकि यज्ञों में समस्त देवों की शक्तियाँ एवं समग्र मानवता का स्वरूप विद्यमान है।

यज्ञ शब्द 'यज्' धातु से निष्पन्न हुआ है, जिसके देवपूजा, संगीतकरण और दान आदि विविध अर्थ हैं। अनेक देवताओं को लक्ष्य कर अग्नि में हविष्य द्वारा, सोम रस द्वारा या हविर्द्रव्य द्वारा हवन करना यज्ञ कहलाता है। वेद में यज्ञ की महिमा इस प्रकार प्रतिपादित है– ''यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः'' अर्थात् यज्ञ ही समस्त ब्रह्माण्ड को बाँधने वाला नाभिकीय स्थान है।[1] हमारे प्राचीन ऋषि–विशेषों ने इसे यज्ञ पुरुष कहकर अपने अन्तःकरण में जाग्रत किया।[2] इसी प्रकार 'श्रीमद्भगवद्गीता' में उल्लेख मिलता है, कि उस प्रजापति ने प्रजा की रचना के साथ ही यज्ञ को उत्पन्न किया तथा प्रजा को उपदेश दिया कि इस यज्ञ कर्म के द्वारा तुम नए–नए पदार्थों को उत्पन्न करते रहोगे और इसी के द्वारा तुम्हारी समस्त कामनाएँ पूर्ण होंगी–

> सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
> अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्तिवष्टकामधुक्।।[3]

'शतपथब्राह्मण' में भी यज्ञ का महत्त्व दृष्टिगोचर होता है वहाँ यज्ञ को आध्यात्मिक और भौतिक दोनों ही प्रकार से श्रेयस्कर बताया है–

> ''एष वै प्रत्यक्षं यज्ञो यत्प्रजापतिः।''[4]

इसके अतिरिक्त यज्ञ को विश्व की उत्तम प्रक्रियाओं के अंश और अमरत्व के रूप में स्वीकार करके इनको सृष्टि का आधार कह सकते हैं। मूलतः यज्ञ वह विधि है, जिसके माध्यम से प्राकृतिक सन्तुलन बनाया जा सकता है। इससे पर्यावरण सुरक्षित, वायुमण्डल पवित्र, विविध रोगों का नाश तथा शारीरिक और मानसिक स्थिति का विकास होता है। वस्तुतः यज्ञ से सम्पूर्ण जगत् की रक्षा की जा सकती है, जैसे कहा गया है, कि अग्नि से धूम, धूम से मेघ और मेघों से वृष्टि होती है– ''अग्नेर्वै धूमो जायते, धूमादभ्रमभ्राद्वृष्टिः।''[5] यज्ञ से विशुद्ध वर्षाजल तथा उससे स्वस्थ जीवन एवं धन–धान्य की प्राप्ति भी होती है।

क्रम भेद के आधार पर वैदिक यज्ञों के विविध प्रकार हैं, जो निम्नलिखित संस्थाओं के अन्तर्गत आते हैं– (क) पाकयज्ञ संस्था, (ख) हविर्याग यज्ञ संस्था (ग) सोमयाग संस्था। (क) 'पाकयज्ञ संस्था' ये गृहय याग कहलाते हैं, इनके सात भेद हैं– औपासन होम, वैश्वदेव, पार्वण, अष्टका, मासिक श्राद्ध, श्रवण आर शूलगव। (ख) 'हविर्याग संस्था' ये श्रौत याग हैं, इनकी संख्या भी सात है– अग्निहोत्र, दर्श–पूर्णमास, आग्रयण, चातुर्मास्य, पशुबन्ध, सौत्रामणि तथा पिण्ड पितृ यज्ञ। (ग) सोमयाग संस्था भी श्रौत यज्ञ कहे गए हैं, ये भी सात हैं–अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र एवं अप्तोर्याम। यज्ञ हेतु स्थापित की जाने वाली अग्नि के भी दो प्रकार माने गए हैं– 'गृहय अग्नि' और 'श्रौत अग्नि'। 'गृहय अग्नि' का स्थापन विवाह के पश्चात् प्रत्येक गृहस्थ के द्वारा किया जाता है। वस्तुतः गृहय कर्म अर्थात् पारिवारिक यज्ञ आदि इसी अग्नि में सम्पादित किए जाते हैं। उपर्युक्त समस्त 'पाकयज्ञ' भी इसी अग्नि में सम्पन्न होते हैं। 'श्रौत अग्नि' में हविर्याग और सोमयाग सम्पादित होते हैं यह चार प्रकार की है– 'गार्हपत्याग्नि', आहवनीयं अग्नि, दक्षिणाग्नि और सभ्याग्नि। 'गार्हपत्याग्नि' हव्य वस्तुओं को पवित्र करती है। 'आहवनीय अग्नि' में देवताओं के लिए आहुति प्रदान की जाती है। 'पितृ यज्ञ' आदि विशेष कृत्यों में दक्षिणाग्नि प्रयुक्त होती है। 'सभ्याग्नि' के द्वारा विशिष्ट यागों को पूर्ण किया जाता है। हविर्याग संस्था से सम्बन्धित यागों का वर्ण्य–विषय इस प्रकार उल्लिखित है–

(1) 'अग्निहोत्र' प्रतिदिन प्रातः काल एवं सायं काल में किए जाने वाला यज्ञ है। इस यज्ञ में घृत, सामग्री, व्रीहि (चावल), यव (जौ), दूध आदि की आहुति दी जाती है। (2) 'दर्श–पूर्णमास यज्ञ' का अमावस्या और पूर्णिमा तिथि को सम्पन्न करने का विधान है, इसमें अग्नि देव एवं सोम देव के लिए घृत और पुरोडाश (पिसे हुए चावल का पूआ) की आहुति प्रदान की जाती है। अमावस्या को सम्पन्न किए जाने वाले यज्ञ में अग्नि देवता हेतु पुरोडाश तथा इन्द्र देव के लिए दही और दूध से निर्मित पदार्थों की आहुति दी जाती है। (3) 'आग्रयण यज्ञ' नई फसल की प्राप्ति के लिए किया जाता है। इसमें शरद् ऋतु में धान तथा वसन्त ऋतु में जौ–चना की आहुति देने का नियम है। यज्ञ करने के पश्चात् नए अन्न का सेवन किया जा सकता है। (4) 'चातुर्मास्य यज्ञ' प्रत्येक चौथे मास की पूर्णिमा को

किया जाता है। इसके चार पर्व हैं, जिनके नाम और अनुष्ठान के दिन अधोलिखित हैं– वैश्वदेव पर्व का अनुष्ठान फाल्गुन पूर्णिमा को, वरुण–प्रघान का अनुष्ठान आषाढ़ की पर्णिमा को, साकमेध का अनुष्ठान कार्तिक पूर्णिमा को, गुनासीरीय का अनुष्ठान फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा को करने का विधान है। (5) 'पशुबन्ध यज्ञ' में घृत, दुग्धादि हेतु पशुओं को बाँधने का प्रचलन है। (6) 'सौत्रामणी याग' का महत्त्व इन्द्र देव के लिए अत्यधिक माना गया है और यह भी कहा गया है, कि राजा राज्याभिषेक के अवसर पर अपनी धन–समृद्धि के लिए इस यज्ञ को सम्पन्न करे। इन्द्र के साथ–साथ अश्विन सरस्वती भी इस यज्ञ के देवी–देवता कहे गए हैं, इनके लिए सोम रस तथा शुद्ध जौ से निर्मित पदार्थों की हवि देने का विधान है। (7) 'पिण्ड पितृ यज्ञ' को माता–पिता के सुख–वैभव एवं उनकी दीर्घ आयु के निमित्त सम्पादित किया जाता है। इसमें पितरों को जो खाद्यान्न दिया जाता है, उसे ही हवि कहा गया है। सोमयाग से सम्बद्ध पूर्व वर्णित यज्ञों का विषय–विस्तार इस प्रकार है–(1) 'अग्निष्टोम' में 'यज्ञायज्ञा वो अग्नये'' इस ऋचा पर सामगान करने का नियम है। प्रस्तुत मंत्र में 'अग्नये' पद (अग्नि) है, इसलिए यह के नाम से अभिहित है। स्तोम से तात्पर्य है स्तुति, अतः अग्निष्टोम अग्नि की स्तुति अथवा अग्नि का स्तोत्र है। यह यज्ञ पाँच दिन तक चलता है, इसमें बारह मंत्रों का उपयोग होता है। (2) 'उक्थ' की समाप्ति 'सामवेद' के मंत्रों के द्वारा होती है। अग्निष्टोम यज्ञ में प्रयुक्त बारह मंत्रों में तीन मन्त्रों का योग होने से उक्थ में उच्चरित मंत्रों की संख्या पन्द्रह हो जाती है। (3) 'षोडशी' यज्ञ में उपर्युक्त 15 मन्त्रों में एक मन्त्र और बढ़ने पर मन्त्रों की संख्या सोलह मानी गई है। (4) 'अतिरात्र' में षोडशी के पश्चात् अतिरात्र–संज्ञा वाले मंत्रों का गायन इस यज्ञ के अंत में किया जाता है, इसलिए यह अतिरात्र कहलाता है। 'ज्योतिष्टोम' उपर्युक्त चारों यागों का नाम है। त्रिवृत् (तीन बार दुहराना), पंचदश (पन्द्रह बार दुहराना), सप्तदश (सत्रह बार दुहराना) तथा एकविंश (इक्कीस बार दुहराना) इन चारों स्तोमों को ही 'ज्योतिः' कहा गया है। (5) अग्निष्टोम में यज्ञ के सम्पन्न होने के पश्चात् षोडशी साम द्वारा यज्ञ को जो समापन किया जाता है उसे अत्यग्निष्टोम कहते हैं। (6) 'वाजपेय' एवं (7) 'आप्तोर्याम' याग पूर्व वर्णित ज्योतिष्टोमों में प्रयोग किए गए मन्त्रों की कुछ ग्रहण करना और कुछ छोड़ना जैसी क्रियाओं के द्वारा सम्पन्न होते हैं। इन यज्ञों के अतिरिक्त वैदिक साहित्य में अन्य यज्ञों के महत्त्व पर भी प्रकाश डाला गया है, जो निम्नांकित है–'अश्वमेघ यज्ञ', 'वाजपेय यज्ञ', 'राजसूय यज्ञ' और 'व्रात्यस्तोम यज्ञ'। 'अश्वमेध यज्ञ' के अन्तर्गत दिग्विजयार्थ सशस्त्र सैनिक गणों के संरक्षण में अश्व को छोड़ा जाता है। एक वर्ष तक यह अश्व चारों दिशाओं में समस्त स्थानों पर भ्रमण करता है। अश्व के सकुशल लौट आने पर राजा की दिग्विजय होती है। इसके बाद विशिष्ट विधि से इसका समापन होता है। वस्तुतः अभिषिक्त राजा के द्वारा ही इस यज्ञ का अनुष्ठान करना आवश्यक माना गया है। 'वाजपेय यज्ञ' का वेद कालीन समाज में विशेष स्थान है। यजुर्वेद में 'वाजपेय यज्ञ' का उल्लेख प्राप्त होता है–

वाजस्येमं प्रसवः सुषुवेऽग्रे सोमं राजानमोषधीष्वप्सु।
ता अस्मभ्यं मधुमतीर्भवन्तु वयं
राष्ट्र जागृयाम पुरोहिताः स्वाहा।।[6]

'राजसूय यज्ञ' करने के पश्चात् राजा को राजत्व की प्राप्ति होती है। इसके आरम्भ में अग्निष्टोम, कतिपय इष्टियाँ तथा चातुर्मास्य यज्ञ का अनुष्ठान करना महत्त्वपूर्ण होता है। राजसूय यज्ञ में ऋत्विजों एवं रत्नियों को उपहार दिए जाने की परम्परा भी होती है। 'व्रात्यस्तोम यज्ञ' के अन्तर्गत व्यक्ति के मन व आचारों को पवित्र किया जाता था मान्यता है, कि इसके माध्यम से वे पुनः अपने कुल में स्थान पाकर कृषि, व्यापार आदि वृत्तियों को करने में संलग्न होते थे। 'अथर्ववेद' में 'व्रात्ययज्ञ' का वर्णन मिलता है–

'अह्ना प्रत्यङ् व्रात्यो रात्र्या प्राङ् नमो व्रात्याय।।'[7]

इस प्रकार राज्य की उन्नति, समृद्धि और पारिवारिक जीवन को सफल बनाने के निमित्त इन यज्ञों को वैदिक साहित्यक में उल्लिखित किया गया है।

वेदों में इन यज्ञों के साथ ही 'पंचमहायज्ञों' का भी अतयधिक गौरव है। इन पंचमहायज्ञों का अनुष्ठान करना प्रत्येक गृहस्थ जन के लिए आवश्यक माना गया है। ये पंचमहायज्ञ मुख्यतः इस प्रकार हैं–'ब्रहमयज्ञ', 'देवयज्ञ', 'पितृयज्ञ', 'बलिवैश्वदेव यज्ञ' तथा 'अतिथियज्ञ'। 'ब्रह्मयज्ञ' में प्रातः और सायंकाल ब्रह्म की उपासना की जाती है। इसके साथ–साथ ब्रह्मचर्य व्रत का निर्वाह करते हुए आचार्य जनों की सेवा व आज्ञा का पालन करते हुए उनसे स्वाध्याय अर्थात् वेदों की शिक्षा ग्रहण करना भी 'ब्रह्मयज्ञ' है। 'देवयज्ञ' दैनिक अग्निहोत्र अथवा हवन है। निर्देश है कि व्यक्ति को इस अग्निहोत्र कर्म को सायंकाल और प्रातःकाल दोनों समय करना चाहिए। अग्निहोत्र में प्रदीप्त अग्नि से गृह की रक्षा एवं वस्तुएँ तथा वायु शुद्व होती है जिसके कारण गृह में समस्त क्लेशों व रोगों को नष्ट किया जा सकता है–

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातः
सौमनसस्य दाता।
वसोर्वसोर्वसुदान एधि वयं त्वेन्धानास्तन्वंपुषेम।।[8]

इसके अतिरिक्त 'देवयज्ञ' को पूर्ण करने से शरीर की पुष्टि और दीर्घायुष्य की भी प्राप्ति होती है। अथर्ववेद अग्निहोत्र की एक विशेषता यह है कि, यज्ञ में दिए जाने वाले आहुतिरूपी पदार्थ जैसे घृत, सामग्री आदि कदापि व्यर्थ नही जाते हैं, जितना व्यय यज्ञों में होता है, व्यक्ति को उसका कई गुना बढ़कर फल के रूप में प्राप्त हो जाता है–

पूर्णा दर्वे परा पत सुपूर्णा पुनरापत।
सर्वान् यज्ञान् संभुञ्जतीषमूर्ज न आ भर।

प्रस्तुत मंत्र में कड़छी के विषय में कहा गया है, कि तू घी से भरी जाकर अग्नि की ओर प्रविष्ट हो, फलों से भी अधिक भरी हुई होकर फिर हमारे समीप वापिस आ। तू समस्त यज्ञों में भाग लेती हुई हमारे निमित्त अन्न और शक्ति को ला।[9] 'पिण्ड पितृ यज्ञ' को पितरों के सम्मान के लिए अति महत्त्वपूर्ण माना गया है तथा पितृ यज्ञ का विधान माता–पिता के सत्कार व गुरुजनों की शुश्रुषा हेतु परमावश्यक है। प्रत्येक गृहस्थ जन को अपने पितरों को प्रिय लगने वाली वस्तुओं को प्रदान करके उनका आदर–सत्कार करना चाहिए और उनके द्वारा दिये गए उपदेशों को सत्यागामी होकर श्रवण करना एवं उनका अनुकरण करना पारिवारिक सदस्यों के लिए अति महत्त्वपूर्ण है। वस्तुतः यह प्रत्येक मास होने वाला यज्ञ है, यथा–

परायात पितरः सोम्यासो गम्भीरैः
पथिभिः पूर्याणैः।
अधा मासि पुनरायात नो गृहान्
हविस्त्तुं सुप्रजसः सुवीराः।।[10]

'बलिवैश्वदेव यज्ञ' में प्रतिदिन पकाये हुए भोजन में से कुछ अंश आहुति के रूप में अग्नि में डाला जाता है तथा कुछ भाग पशु–पक्षियों आदि प्राणियों को भी अर्पित किया जाता है। वेदों में कहा गया है, कि जैसे अश्व को नित्य घास दी जाती है वैसे ही अन्य प्रणियों को भी गृहस्थों द्वारा उचित भोज्य पदार्थ देना उत्तम है।[11] अतिथि को अन्न देना, उसे उपहार देना, उसके प्रति

सेवा–भाव रखना ही 'अतिथियज्ञ' कहलाता है। वेदों में निर्देश दिया गया है, कि अपने कार्यों को महत्त्व न देते हुए गृहस्थ जन सर्वप्रथम अतिथि सत्कार करें। अतिथि सत्कार करना मानो 'प्राजापत्ययज्ञ' को सम्पन्न करना है, जैसे दर्शाया गया है– ''प्राजापत्यो वा एतस्य यज्ञो विततो य उपहरति।[12] मुख्यतः विश्व शान्ति एवं उसके अभ्युदय के लिए मनुष्य द्वारा विविध यज्ञों के अनुष्ठान का प्रतिपादन करना परम आवश्यक है। यज्ञ को मानव–जीवन के लिए पवित्र कर्म मानकर उसे अनिवार्य दायित्व के रूप में उपस्थित किया गया है। यज्ञ को इस जन्म और दूसरे जन्म के लिए भी सुख–समृद्धि देने वाला कहकर धार्मिक मार्ग के रूप में अंगीकार किया गया है।

संदर्भ सूची

1. अथर्ववेद, काण्ड–9, सूक्त–10, मंत्र–14
2. ऋग्वेद, मण्डल दशम, सूक्त–90, मंत्र–6
3. श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय–3, श्लोक–10
4. शतपथब्राह्मण, 4/3/4/3
5. शतपथब्राह्मण, 5/3/5/17
6. यजुर्वेद, अध्याय–9, मंत्र–23
7. अथर्ववेद, काण्ड–15, सूक्त–18, मंत्र–5
8. अथर्ववेद, काण्ड–19, सूक्त–55, मंत्र–3
9. अथर्ववेद, काण्ड–3, सूक्त–10,मंत्र–7
10. अथर्ववेद, काण्ड–18,सूक्त–4,मंत्र–63
11. अथर्ववेद, काण्ड–19,सूक्त–55,मंत्र–6
12. अथर्ववेद, काण्ड–9, सूक्त–6,मंत्र–11